संध्या तिवारी

ई-मेल-sandhyat70@gmail.com

लम्बी होती परछाइयाँ

"बहुत रो रहा है तुम्हारा बच्चा।" मेरे पति ने विडियो कॉलिंग पर कुछ विचलित-सी बैठी अपनी महिला सहकर्मी 'सारा' से कहा।

"हाँ मिहिर, रो तो रहा है। अब क्या करूँ? रोते-रोते उसकी आँखें भी सूज गई हैं। कितनी ही देर हो गई है उसे फीड भी नहीं करा पाई। बेचारा रोते-रोते थक गया है। और अभी कुकिंग भी करनी है। मेरे हसबैंड ने भी कुछ नहीं खाया है। बज भी तो गये हैं रात के साढ़े नौ, लेकिन ये प्रोजेक्ट है कि ख़त्म होने का नाम ही नहीं ले रहा। वर्क फ्रॉम होम है ये, या बवाले-जान।" सारा कुछ रुँआसी और चिड़चिड़ी हो उठी थी। अपने पति मिहिर के पास बैठी मैं अपना फोन चलाते हुए उनकी बातें सुन रही थी। अचानक नानी-माँ याद आ गईं। मेरी नानी-माँ जब भी अपने अतीत में गोता लगातीं, कुछ न कुछ हाथ मुट्ठी ले ही आतीं, फिर चाहे मुट्ठी में कोई कीमती पत्थर हो, खर-पतबार, झाड़-झंकाड़ या शैवाल ही क्यों न हो। एक बार अतीत में गोता लगाकर लौटी नानी-माँ ने हमें बताया था—"बिटिया, हम लोगन की परवरिश भी कोई परवरिश थी, हमारी अम्मा हमें एक बार जो दूध पिबा के टाट-बोरी पर लुढ़का देतीं तो घर का पूरा काम निपटाने के बाद ही उठातीं। ज्यादा रोते-चीखते तो घर की बड़ी-बूढ़ियाँ हमें मक्खी की मुड़ियाभर अफीम चटा देतीं। हम नशे में चुपचाप पड़े रहते और हमारी अम्मायें घर-बाहर के कामों में लगी रहतीं। ऐसे पलते थे हम बच्चे लोग।''

उस समय सुनकर मुझे बहुत गुस्सा और तरस आया था, कि कितने हृदयहीन होते थे पुराने जमाने के लोग। लेकिन, अब का जमाना तो बहुत सेंसिटिव है हर मामले में। तो फिर ये बच्चा इतना क्यों ? कहीं आज के समय में भी उन आदिम परछाइयों का पार्श्व नृत्य तो नहीं चल रहा जो आदि से अनादि तक केवल रूप बदलती आ रही हैं।

सच-सच बताना

संध्या तिवारी

बात इतनी भी पुरानी नहीं। इसी सदी की है, जब माँ-बाप सुबह चार बजे उठा देते और कहते; "हाथ- मुँह धोकर पढ़ने बैठो।"

झपकियों, जम्हाइयों और चोरी-छुपे पलकें बन्द कर छोटी-मोटी झपकी मारकर भी डर के कारण पढ़ने का नाटक ही सही, किया करते थे। सोचते थे—कौन-सा ऐसा दिन होगा, जब मन भर नींद लेकर उठने पर डाँट या मार नहीं पड़ेगी। न जाने हम में से कितनों ने डरते-डरते ही सही मन की बात कह डाली होगी । प्रति-उत्तर भी जाना-पहचाना ही आया होगा—"जब पढ़ाई खत्म हो जायेगी तब।"

तब पढ़ते-पढ़ते ब्याह हो जाते थे। हम जिस देहरी जा लगते, वहाँ अन्य अघोषित नियमों के साथ एक अनिवार्य नियम होता था कि, घर की बहू को सबके उठने से पहले उठना और सोने के बाद सोना है। अघोषित नियमों की अदृश्य लक्ष्मण रेखा उन दिनों लाँघी नहीं जाती थी। फिर हमारे परिवार बढ़े। पति बच्चों की जिम्मेदारियों ने नींदभरी आँखों से उठना और घर-बाहर के कामों में जूझते रात गये बिस्तर पर ढेर हो जाने को ही नियति बनाया। समय के अन्तराल में बच्चे दूर जा बसे। पति गोलोक, या ढेरों बीमारियों के शिकार। अब हमारी नींद को कोई कुछ नहीं कहता; लेकिन नींद नहीं आती। अपनों के लिए ही सही, अपने लिए ही सही, जीवन संघर्ष में 'मुचकुन्द' तुम्हारी बार-बार याद आती रही। क्या बरसों-बरस देवों की ओर से ही सही, युद्ध लड़ते-लड़ते तुम इतना थक गए कि वरदान में अपरिमित नींद माँग ली। जीवन संघर्षों से लड़ते-लड़ते हम भी थक गए, हमने भी देवों से नींद माँगी; लेकिन देवों ने कहा—"आज तक कभी किसी स्त्री ने ऐसा वरदान नहीं माँगा, क्योंकि स्त्रियाँ थकती ही नहीं। तुम सब कैसे थक सकती हो?"

हम भौचक देखते रह गए। हमारी आँखों की नींद कहीं बिला गई थी। हमें अब नींद नहीं आती। नींद की गोलियाँ खाकर भी नहीं। लेकिन मुचकुन्द तुमसे एक बात पूछनी है। सच सच बताना—"क्या केवल तुम्हीं लोग थकते हो। हम कभी नहीं?"

स्त्री विमर्श...माई

कितनी बार कहा तुम्हें—ये टी-शर्ट मत निकाला करो, इसमें जेब नहीं है। मुझे कितनी दिक्कत होती है, न पेन रख सकता हूँ न मोबाइल और न पैसे।

पति की झल्लाहट देख मैंने वातावरण हल्का करने की गरज से कहा, " तुम एक दिन में बिना जेब के झल्लाने लगते हो; हम औरतों को देखो—न साड़ी में जेब न ब्लाउज़ में, न सलवार में जेब न कुर्ते में...। हम तीन सौ पैंसठ दिन ऐसे ही काम चलाती हैं।"

पति मुंह बिचकाते हुए बोले, "तो मैंने कहा था तुम सब ऐसे परिधान पहनो। और हाँ, मैं तो राह चलते औरतों को देखता हूँ—ब्लाउज़ में हाथ डाल-डालकर फोन, पर्स, पैसा सब कुछ निकालती, धरती हैं। वे भी तो साड़ी, सूट ही पहनती हैं। तुम भी न हर बात का बतंगड़ बनाती हो। चलो जल्दी नाश्ता लगा दो, मुझे आफिस को देर हो रही। और हाँ, जेब वाली शर्ट भी निकाल दो।"

पिछले आधे घण्टे से हम पति-पत्नी की नोंक-झोंक सुनती सासु माँ मुझसे मुखातिब हो बोलीं, "पता है श्रद्धा, औरतों के पारंपरिक परिधानों में जेब नहीं होती, लेकिन पहले शादी ब्याह में दुल्हन के पहनने वाले ब्लाउज़ में स्पेशली जेबें लगाई जाती थीं। विदा के समय लड़की की जेब में कुछ मेवे और पैसे रख दिए जाते थे, मने एक दिन के लिए उसे भी आत्मनिर्भर होने का मौका दिया जाता था।" दो पल ठहर कर उन्होंने मेरे पति को देखा, फिर गहरी साँस खींचकर बोलीं, "बेटा, मानो या न मानो पॉकेट और पैसा है तो स्वामित्व का लक्षण ही।"

"स्वामित्व माई फुट। तुम लोगों को हर बात में स्त्री विमर्श कहाँ से सूझ जाता है।" बौखलाए पति ने बिना जेब वाली टी-शर्ट के चीथड़े कर दिए।